eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 03, Issue 03, March 2024

न्यायिक सक्रियता एवं श्रमिक कल्याण

पूजा शुक्ला[1]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग, भगवानदीन कन्या पीजी कॉलेज लखीमपुर खीरी

Received: 15 March 2024 Accepted & Reviewed: 25 March 2024, Published : 31 March 2024

Abstract

न्यायिक सक्रियता (Judicial Activism) भारतीय लोकतंत्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, जिसने संविधान में निहित मौलिक अधिकारों और सामाजिक न्याय के उद्देश्यों को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विशेषकर श्रमिक वर्ग, जो समाज का सबसे संवेदनशील और कमजोर तबका माना जाता है, उनके अधिकारों की सुरक्षा और कल्याण हेतु न्यायपालिका ने समय–समय पर सक्रिय हस्तक्षेप किया है। न्यायिक सक्रियता के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने श्रमिकों के जीवन, गरिमा, न्यूनतम वेतन, कार्यस्थल पर सुरक्षा, महिला श्रमिकों के अधिकार और असंगठित क्षेत्र के मजदूरों की समस्याओं पर कई ऐतिहासिक निर्णय दिए हैं। इस प्रकार न्यायपालिका ने श्रमिक कल्याण को केवल वैधानिक या नीतिगत दायरे तक सीमित न रखते हुए उसे मौलिक अधिकारों से जोड़कर एक व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान किया है। प्रस्तुत शोध में न्यायिक सक्रियता और श्रमिक कल्याण के अंतर्संबंध का अध्ययन करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि न्यायपालिका ने किस प्रकार सामाजिक न्याय की अवधारणा को साकार करने में सक्रिय भूमिका निभाई है।

मुख्य शब्द– न्यायिक सक्रियता, श्रमिक कल्याण, सामाजिक न्याय, मौलिक अधिकार, श्रम कानून, न्यूनतम वेतन, असंगठित क्षेत्र, महिला श्रमिक अधिकार

Introduction

भारतीय संविधान में प्रथम मौलिक अधिकारों के अंतर्गत अनुच्छेद 23 व अनुच्छेद 24 का प्रावधान है जिसमें अनुच्छेद 23 बलात् श्रम का निषेध करता है वहीं अनुच्छेद 24, 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को जोखिम भरे कार्यों में नियोजित करने पर रोक लगाता है। किंतु अत्यधिक गरीबी अशिक्षा एवं भ्रष्टाचार के परिणामस्वरूप, कई लोगों को उनकी इच्छा के विरुद्ध सस्ती दरों पर काम करने के लिए मजबूर होना पड़ता है और लाखों महिलाएं और बच्चे मानव तस्करी का शिकार बन जाते हैं। ग्लोबल स्लेवरी इंडेक्स के अनुसार, 2016 में भारत में 18.3 मिलियन लोग आधुनिक गुलामी में थे। 2018 वैश्विक गुलामी सर्वेक्षण रिपोर्ट में कहा गया है कि देश में जबरन यौन शोषण और बाल श्रम में और वृद्धि हुई है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 और 24 में निहित शोषण के खिलाफ अधिकार मानवीय गरिमा की गारंटी देता है और लोगों को ऐसे किसी भी शोषण से बचाता है। इस प्रकार, मानवीय गरिमा और स्वतंत्रता के सिद्धांतों को कायम रखना, जिस पर भारतीय संविधान आधारित है अनुच्छेद 23 का खंड 1 मानव तस्करी, किसी भी प्रकार के जबरन श्रम से बेगार पर रोक लगाता है। इसमें यह भी कहा गया है कि इस प्रावधान का कोई भी उल्लंघन कानून द्वारा दंडनीय है। यह स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित करता है। मानव तस्करीः इसका तात्पर्य यौन दासता, जबरन वेश्यावृत्ति या जबरन श्रम के उद्देश्य से मनुष्यों की बिक्री और खरीद से है।

बेगारः यह जबरन मजदूरी का एक रूप है जिसका तात्पर्य किसी व्यक्ति को बिना किसी पारिश्रमिक के काम करने के लिए मजबूर करना है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 03, Issue 03, March 2024

जबरन श्रम के अन्य रूप इसमें जबरन श्रम के अन्य रूप शामिल हैं जिसमें व्यक्ति न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी पर काम करता है। इसमें बंधुआ मजदूरी शामिल है जिसमें किसी व्यक्ति को अपर्याप्त पारिश्रमिक के लिए अपना कर्ज चुकाने के लिए काम करने के लिए मजबूर किया जाता है, जेल श्रम जिसमें कठोर कारावास के लिए भेजे गए कैदियों को न्यूनतम पारिश्रमिक के बिना भी काम करने के लिए मजबूर किया जाता है आदि। इसलिए, अनुच्छेद 23 में यह सुनिश्चित करने का बहुत व्यापक दायरा है कि किसी व्यक्ति को अनैच्छिक रूप से कुछ भी करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यह भूमि–मालिक को भूमिहीन, गरीब मजदूर को मुफ्त सेवाएँ प्रदान करने के लिए बाध्य करने से रोकता है। यह किसी महिला या बच्चे को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करने पर भी रोक लगाता है। भारतीय न्यायपालिका द्वारा समय–समय पर बंधुआ मजदूरी बाल श्रम आसमान वेतन से संबंधित विभिन्न वादों पर महत्वपूर्ण निर्णय दिए गए हैं –

मुंबई कामगार सभा बनाम अब्दुलभाई फैज़ुल्लाभाई मामला (1)

यह बोनस भुगतान अधिनियम, 1965 से संबंधित एक ऐतिहासिक निर्णय है।

इस निर्णय को जनहित याचिका की अवधारणा पर चर्चा करने वाले पहले निर्णयों में से एक माना जाता है। यह फैसला न्यायमूर्ति वी.आर.कृष्ण अय्यर और न्यायमूर्ति एन.एल. उंटवालिया की दो न्यायाधीशों की पीठ ने सुनाया। 1965 से पहले, शहर के किसी इलाके में छोटे व्यवसायी स्वैच्छिक रूप से अपने श्रमिकों को अतिरिक्त बोनस देते थे, जिसे उन्होंने उस वर्ष अचानक बंद कर दिया। बोनस भुगतान बंद किये जाने से असंतुष्ट श्रमिकों ने पहले औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत मध्यस्थ बोर्ड से संपर्क किया, जिसने उनकी मांग को खारिज कर दिया। जब श्रमिकों ने अपना मामला औद्योगिक न्यायाधिकरण में ले गए, तो न्यायाधिकरण ने यह तर्क देते हुए उनके दावे को खारिज कर दिया कि पिछले बोनस भुगतान केवल एक परंपरा थी, न कि कानूनी अधिकार। न्यायाधिकरण ने यह भी माना कि इस मामले पर आगे विचार करना कानूनी रूप से वर्जित है, क्योंकि इस पर मध्यस्थता बोर्ड द्वारा पहले ही निर्णय ले लिया गया है। उच्च न्यायालय में अपील करने पर, श्रमिक संघ को नियोक्ताओं की ओर से चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिन्होंने अपील करने के संघ के कानूनी अधिकार को चुनौती दी तथा तर्क दिया कि बोनस अधिनियम केवल लाभ–आधारित बोनस को ही कवर करता है। उच्च न्यायालय ने अंततः श्रमिकों की अपील को खारिज कर दिया, जिससे पहले के उन निर्णयों को समर्थन प्राप्त हुआ, जिनमें श्रमिकों को बोनस का दावा देने से मना कर दिया गया था। शामिल प्रमुख मुद्दा यह था कि, क्या वर्तमान तथ्यों के आधार पर श्रमिक बोनस के हकदार हैं? कहा जाता है कि इस निर्णय ने भारत में जनहित याचिका का शुभारंभ किया। न्यायालय ने कहा कि प्रक्रियागत दोषों के कारण वास्तविक शिकायतों की सुनवाई में बाधा नहीं आनी चाहिए तथा प्रक्रियागत आवश्यकताओं की तुलना में ठोस न्याय के महत्व पर बल दिया। न्यायालय ने कहा कि कानूनी प्रणाली को सामूहिक प्रतिनिधित्व की अनुमति देनी चाहिए। यूनियन जैसी संस्थाएं श्रमिकों के व्यापक हितों का प्रभावी ढंग से प्रतिनिधित्व कर सकती हैं, भले ही वे तकनीकी रूप से किसी विवाद में प्रत्यक्ष पक्ष न हों। इस संदर्भ में दर्शन यह है कि प्रक्रिया न्याय की दासी है, न कि उसकी रखैल। जब काफी संख्या में लोग एक ही उपाय साझा करते हैं तो जनहित याचिका को एक वैध कानूनी तंत्र के रूप में मान्यता दी जाती है। इस प्रकार, न्यायालय ने कानूनी कार्यवाही में प्रत्येक व्यक्तिगत कार्यकर्ता का नाम बताने की

कठोर आवश्यकता को खारिज कर दिया, तथा एक अधिक लचीले दृष्टिकोण को प्राथमिकता दी, जो समूह प्रतिनिधित्व की अनुमति देता है।

न्यायालय ने बोनस के संबंध में निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया –

न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि बोनस अधिनियम की व्याख्या इस प्रकार नहीं की जानी चाहिए कि इसमें उन सभी प्रकार के बोनस को पूरी तरह समाप्त कर दिया गया है जिनका उल्लेख इसके प्रावधानों में स्पष्ट रूप से नहीं किया गया है। बोनस की कानूनी समझ सद्भावना के स्वैच्छिक संकेत से लेकर संविदागत रूप से लागू करने योग्य अधिकार तक फैली हुई है, जो स्थापित कार्यस्थल प्रथाओं से उभरती है।

कानूनी परिप्रेक्ष्य मुआवजा तंत्र की लचीली और प्रगतिशील व्याख्या की वकालत करता है जो नियोक्ता के हितों और श्रमिक अधिकारों दोनों का सम्मान करता है। श्रम को राष्ट्रीय आर्थिक आत्मनिर्भरता की रीढ़ मानते हुए, न्यायालय ने बोनस की सूक्ष्म समझ का समर्थन किया है, जो महज वित्तीय लेनदेन से कहीं आगे तक जाती है। न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि बोनस दावों का मूल्यांकन अलग से नहीं, बल्कि औद्योगिक न्याय और विकासात्मक न्यायशास्त्र के व्यापक ढांचे के भीतर किया जाना चाहिए। इसके बाद न्यायालय ने वर्तमान मामले में रचनात्मक रिस जुडिकाटा की प्रयोज्यता के संबंध में निम्नलिखित बिंदुओं पर चर्चा की –

इस मामले में वकील ने तर्क दिया कि चूंकि वर्ष 1965 में प्रथागत या अनुबंध बोनस के लिए कोई मामला मध्यस्थता बोर्ड के समक्ष नहीं उठाया गया था, इसलिए इस तरह के दावे को रिस जुडिकाटा के सिद्धांतों के तहत बाद की कार्यवाही में रोक दिया जाना चाहिए। यह तर्क दिया गया कि औद्योगिक विवादों को रिस जुडिकाटा के सामान्य सिद्धांतों से छूट नहीं दी गई है। न्यायालय ने औद्योगिक संबंधों की विशिष्ट प्रकृति को स्वीकार करते हुए, रचनात्मक न्यायिक निर्णय के परिष्कृत सिद्धांत को औद्योगिक विवादों तक विस्तारित करने के बारे में संदेह व्यक्त किया। न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि औद्योगिक विवादों में श्रमिकों के दावों पर विचार करने में लचीलापन होना चाहिए तथा सुझाव दिया कि यदि श्रमिक किसी पिछले निर्णय से असंतुष्ट हैं, तो उन्हें नया औद्योगिक विवाद उठाने का अधिकार होना चाहिए। निर्णय में औद्योगिक विवादों को सुलझाने में गैर–मुकदमेबाजी तंत्र को प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है, तथा औद्योगिक शांति बनाए रखने के लिए बातचीत और मध्यस्थता को अधिक प्रभावी दृष्टिकोण माना गया है। अंततः, न्यायालय ने माना कि बोनस अधिनियम (जैसा कि 1965 में था) प्रथागत बोनस या सेवा की शर्तों पर आधारित दावों पर रोक नहीं लगाता है, तथा औद्योगिक न्यायाधिकरण को विवाद का निर्णय उसके गुण–दोष के आधार पर करने का निर्देश दिया। न्यायालय ने अंततः निष्कर्ष निकाला कि बोनस अधिनियम प्रथागत बोनस या सेवा की शर्तों पर आधारित दावों पर रोक नहीं लगाता है। इस मामले में न्यायालय ने श्रमिक को बोनस के भुगतान के पीछे के न्यायशास्त्र पर चर्चा की। यह औद्योगिक श्रमिकों के अधिकारों से संबंधित एक बहुत ही महत्वपूर्ण निर्णय है।

बंधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत संघ (2)

बंधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत संघ, 1984 का एक ऐतिहासिक मामला है, जो बंधुआ मजदूरी के मुद्दे पर भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुनाया गया था। यह मामला बंधुआ मुक्ति मोर्चा द्वारा दायर एक जनहित याचिका से उत्पन्न हुआ था, जो बंधुआ मजदूरों की मुक्ति के लिए काम करने वाला एक संगठन है। इस

मामले में, न्यायालय ने बंधुआ मजदूरों की दुर्दशा पर ध्यान दिया और सरकार को बंधुआ मजदूरों की पहचान करने, उनका पुनर्वास करने और बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 को लागू करने का निर्देश दिया।

इस मामले में, BMM ने आरोप लगाया कि उत्तर प्रदेश के पत्थर खदानों में काम करने वाले कई मजदूर बंधुआ मजदूरों की तरह रह रहे थे और उन्हें अमानवीय परिस्थितियों में काम करने के लिए मजबूर किया जा रहा था। याचिका में कहा गया था कि इन मजदूरों को कम वेतन दिया जा रहा था, रहने की खराब स्थिति थी और उन्हें चिकित्सा सुविधाओं तक पहुंच नहीं थी। इसके अलावा, कई बच्चे भी खदानों में काम कर रहे थे, जो बाल श्रम पर प्रतिबंध लगाने वाले कानूनों का उल्लंघन था। सर्वोच्च न्यायालय ने इन आरोपों को गंभीरता से लिया और मामले की जांच के लिए एक समिति का गठन किया। समिति ने पाया कि BMM के आरोप सही थे और उत्तर प्रदेश के खदानों में बंधुआ मजदूरी प्रचलित थी। न्यायालय ने तब सरकार को बंधुआ मजदूरों की पहचान करने, उनका पुनर्वास करने और बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 को लागू करने का निर्देश दिया।

इस फैसले ने बंधुआ मजदूरी के खिलाफ लड़ाई में एक महत्वपूर्ण मोड़ दिया और सरकार को बंधुआ मजदूरों की दुर्दशा को दूर करने के लिए आवश्यक कदम उठाने के लिए मजबूर किया। इस मामले ने यह भी रेखांकित किया कि संविधान का अनुच्छेद 21 शोषण से मुक्त होकर सम्मान के साथ जीने का अधिकार सुनिश्चित करता है।

संजीत राय बनाम राजस्थान राज्य (3)

संजीत राय बनाम राजस्थान राज्य के वाद में सामाजिक कार्यकर्ता संजीत रॉय ने एक याचिका दायर कर राजस्थान राज्य द्वारा सूखा राहत कार्यक्रमों में कार्यरत श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी के भुगतान को चुनौती दी। राज्य सरकार ने तर्क दिया कि सूखा राहत कार्य में लगे श्रमिकों को वेतन के बजाय राहत का एक रूप मिल रहा है, और इस प्रकार न्यूनतम वेतन कानून उन पर लागू नहीं होता। सर्वोच्च न्यायालय ने एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया जिसमें श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी प्राप्त करने के अधिकार को बरकरार रखा गया, न्यायालय ने कहा कि राज्य सूखा राहत कार्य में लगे श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के तहत निर्धारित न्यूनतम मजदूरी से कम भुगतान नहीं कर सकता। न्यायालय ने फैसला सुनाया कि न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी का भुगतान अनुच्छेद 23 के तहत श्रमिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। इसमें इस बात पर जोर दिया गया कि सूखा राहत कार्य में लगे श्रमिकों सहित सभी श्रमिक न्यूनतम मजदूरी पाने के हकदार हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उनका शोषण न हो तथा न्यूनतम मजदूरी प्राप्त करने का अधिकार अनुच्छेद 23 के तहत एक मौलिक अधिकार है , जो जबरन श्रम और शोषण पर रोक लगाता है।

पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया 1982 (4)

11 मई, 1982 को पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स एंड अदर्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एंड अदर्स का मामला में पीएन भगवती, बहारूल इस्लाम, (जे) की पीठ ने फैसला सुनाया। याचिकाकर्ताओं पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स एंड अदर्स ने पीएन भगवती को लिखे एक पत्र के माध्यम से उन मजदूरों की भयानक स्थिति पर प्रकाश डाला है, जिन्हें प्रतिकूल परिस्थितियों में काम करने के लिए मजबूर किया गया था, न्यायालय ने इसे एक जनहित याचिका के रूप में माना। इस ऐतिहासिक फैसले के माध्यम

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 03, Issue 03, March 2024

से, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने न केवल अनुच्छेद 32 के दायरे को बढ़ाया है, बल्कि यह भी आश्वासन दिया है कि न्यायालय सभी का है और यदि श्रम कानूनों जैसे लाभकारी कानूनों का उल्लंघन होता है तो यह मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के समान होगा इसी के साथ न्यायालय ने जबरन मजदूरी और बेगार उदार व्याख्या की।

सलाल हाइड्रो प्रोजेक्ट बनाम जम्मू–कश्मीर राज्य (5)

सलाल हाइड्रो प्रोजेक्ट मामला, विशेष रूप से सलाल हाइड्रो–इलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट पर काम करने वाले मजदूर बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (1984), जम्मू और कश्मीर में सलाल हाइड्रोइलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट पर प्रवासी श्रमिकों के शोषण पर केंद्रित एक ऐतिहासिक जनहित याचिका (पीआईएल) है। इस मामले में श्रम कानूनों के व्यवस्थित उल्लंघन को उजागर किया गया, जिसमें न्यूनतम मजदूरी से इनकार, ठेकेदारों द्वारा शोषण, बाल श्रम और अपर्याप्त रहने की स्थिति शामिल है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले में हस्तक्षेप किया और श्रमिकों को सीधे और बिना कटौती के भुगतान सुनिश्चित करने के लिए नियमित निरीक्षण के निर्देश जारी किए तथा केंद्र सरकार को श्रम कानून के अनुपालन की निगरानी और प्रवर्तन करने के निर्देश दिए।

नीरजा चौधरी बनाम मध्य प्रदेश राज्य (6)

1984 में नीरजा चौधरी बनाम मध्य प्रदेश राज्य मामला एक महत्वपूर्ण निर्णय है, जिसमें बंधुआ मजदूरी के मुद्दे और बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 के प्रवर्तन पर विचार किया गया। इस मामले में इस बात की जांच की गई कि क्या राज्य ने मुक्त बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए अधिनियम के तहत अपने दायित्वों को पूरा किया है।

सामाजिक कार्यकर्ता नीरजा चौधरी ने एक याचिका दायर कर बंधुआ मजदूरों की दुर्दशा पर प्रकाश डाला, जिन्हें मुक्त कराने के बावजूद राज्य द्वारा पुनर्वासित नहीं किया गया। याचिका में तर्क दिया गया कि राज्य की निष्क्रियता बंधुआ मजदूरों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है और बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 के प्रावधानों को लागू करने में विफल रही है। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया, जिसमें मुक्त बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए राज्य के दायित्व पर बल दिया गया। न्यायालय ने माना कि मुक्त बंधुआ मजदूरों का पुनर्वास न करना संविधान के अनुच्छेद 21 और 23 के तहत उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि पुनर्वास के बिना मात्र बंधन से मुक्त करना बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 के उद्देश्यों को पूरा नहीं करता है। और यह फैसला सुनाया कि राज्य का यह कर्तव्य है कि वह मुक्त बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास को सुनिश्चित करे , जिसमें उन्हें रोजगार, वित्तीय सहायता और सम्मानपूर्वक जीवन जीने के लिए अन्य आवश्यक सहायता प्रदान करना शामिल है।

फैसले में राज्य को बंधुआ मजदूरों के लिए एक व्यापक पुनर्वास योजना तैयार करने और उसे लागू करने का निर्देश दिया गया , ताकि मुख्यधारा के समाज में उनका एकीकरण सुनिश्चित हो सके।

एम.सी. मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य (7)

एम.सी. मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य मामला, जिसे बाल श्रम मामला भी कहा जाता है, 1996 में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुना गया एक महत्वपूर्ण मामला है। इस मामले में, न्यायालय ने बच्चों को खतरनाक

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 03, Issue 03, March 2024

उद्योगों में काम पर रखने को संविधान और कानून का उल्लंघन बताया. न्यायालय ने बाल श्रम को समाप्त करने और बच्चों के अधिकारों की रक्षा करने के लिए कई दिशानिर्देश जारी किए. एम.सी. मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य मामले में मुख्य मुद्दा यह था कि क्या बच्चों को खतरनाक उद्योगों में काम पर रखना संवैधानिक और वैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन है?

सर्वोच्च न्यायालय ने माचिस कारखानों और अन्य खतरनाक कारखानों में बाल श्रम की निगरानी के लिए एक समिति का गठन किया ।

समिति की सिफारिशें–

समिति ने बाल श्रम को खत्म करने और बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कई सिफारिशें दीं, जिनमें शामिल थे –

- आतिशबाजी कारखानों में बच्चों को काम पर न रखना।
- बच्चों को 6 घंटे से अधिक काम न करना।
- बच्चों को केवल पैकिंग कार्य में काम पर रखना।
- बच्चों को मनोरंजन, समाजीकरण और शिक्षा की सुविधाएं प्रदान करना।
- बच्चों के लिए बीमा जैसी सुविधाएं प्रदान करना।

न्यायालय ने पाया कि बाल श्रम बच्चों के विभिन्न अधिकारों का उल्लंघन करता है, जिसमें शामिल हैं–

जीवन का अधिकार, शिक्षा का अधिकार. स्वास्थ्य का अधिकार, सुरक्षा का अधिकार, व्यक्तियों के शोषण से सुरक्षा का अधिकार।

यह मामला बाल श्रम को कम करने और बच्चों को खतरनाक उद्योगों में काम करने से बचाने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम था।

इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय व उच्च न्यायालयों ने विभिन्न संगठनों की ओर से आए पत्रों को जनहित वाद के रूप में ग्रहण कर श्रमिकों की शोषणकारी स्थिति बलात श्रम बेगार व बालश्रम से संरक्षण प्रधान कर श्रमिकों को न्याय प्रदान किया है, जिससे उनके कार्य की स्थितियां बेहतर हुई हैं और सामाजिक न्याय की स्थापना हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. 1976 AIR 1455 1976 SCR
2. 1984 AIR 802, 1984 SCR
3. 1983 AIR 328 1983 SCR
4. 1982 AIR 1473 1983 SCR
5. 1984AIR177,1983SCR
6. AIR 1984 SC 1099
7. AIR 1997 SUPREME COURT 699